ओ३म् खम् ब्रह्म

रुद्र ग्रन्थमाला का प्रथमपुष्प—

अथर्व-वेद की प्राचीनता
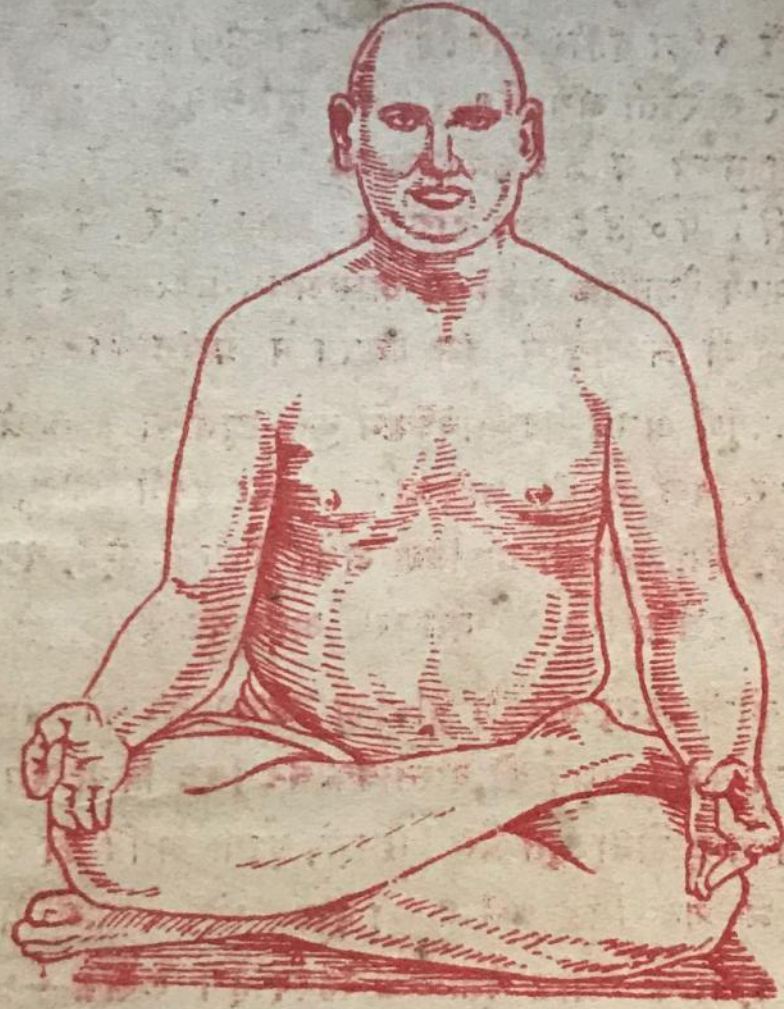
महर्षि दयानन्द की पुण्य स्मृति में समर्पित

लेखक—

अनुसन्धानकर्त्ता शिवपूजनसिंह कुशवाहा 'पथिक' सिद्धान्तशास्त्री साहित्यालङ्कार

प्रकाशक

आदर्श साहित्य मंडल, जंगम बाड़ी, बनारस

प्रथम संस्करण १००० मूल्य ।=)

शिवरात्रि २००६

Q14
H9
2722

भूमिका

वैसे तो सभी वेदोंका विषय गम्भीर है किन्तु उनमें भी अथर्व वेदका विषय अधिक गम्भीर तथा महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यह विज्ञानकाण्ड है। और आजकल विज्ञान का ही युग है। इस युगमें तो सब से अधिक महत्त्व विज्ञान-मूलक अथर्व वेद का ही होगा और होना चाहिये। दुःख का बात है कि महर्षि दयानन्द सरस्वती अथर्ववेद पर भाष्य करनेसे पूर्व ही मोक्ष प्राप्त हुए। सायणाचार्य का भाष्य याज्ञिक कर्मकाण्ड का वर्णन करने से आधुनिक युग के अनुकूल नहीं। प० क्षेमकरण दास, प० सातवलेकर, पं० जयदेव शर्मा जी आदि के भाष्य वैज्ञानिक भाष्य की ओर प्रथम प्रयत्न कहे जा सकते हैं। स्वामी ब्रह्ममुनि जी का प्रयास इस विषय में प्रशंसनीय है।

ऐसे महत्त्वपूर्ण अथर्व वेदके विषयमें कुछ लागोंका बहुत भ्रान्त धारणा है। वे इसे वास्तविक वेद ही नहीं मानते और इसमें जादू, टोना, भूत, प्रेत, झाड़, फूक, तथा वर्तमान प्रचलित अर्थों में जन्त्र, तन्त्र, यन्त्र आदि का वर्णन मानते हैं। इस भ्रान्ति का निराकरण आवश्यक है।

प्रस्तुत छोटी किन्तु सारपूर्ण पुस्तिका 'अथर्व वेद की प्राचीनता' में इस भ्रान्तिको दूर करके अथर्व को वास्तविक वेद सिद्ध किया गया है। साथ ही अथर्ववेद में जादू टोना भूत प्रेत पिशाच, कृत्या आदि का असली स्वरूप बता कर लेखक ने यह सिद्ध करने का पूरा और सफल प्रयत्न किया है कि ये यन्त्र, तन्त्र, मन्त्र आदि वैज्ञानिक रहस्य हैं। लेखक—श्री शिवपूजन सिंह कुशवाहा 'पथिक' साहित्यालंकार, सिद्धान्तशास्त्री का यह प्रयत्न सराहनीय है। लेखक महोदय स्वाध्याय-शील तथा वैदिक साहित्य में परिश्रमी और 'लेखनीवीर' हैं। प्रायः सभी वैदिक पत्रों में आपके लेख प्रकाशित होते रहते हैं। प्रस्तुत लेख भी भारत की वेद सम्बन्धी एकमात्र जनप्रिय महत्त्वपूर्ण. काशीसे निकलनेवाली 'वेदवाणी' में प्रकाशित हो चुका है। आशा है वेदप्रेमी धार्मिक जनता पुस्तिका को सप्रेम अपनायेगी।

वैदिक धर्म तथा साहित्य का सेवक—
वीरेन्द्र शास्त्री एम० ए०, साहित्याचार्य, काशी।

अथर्व वेद की प्राचीनता

—:◎:०:◎:—
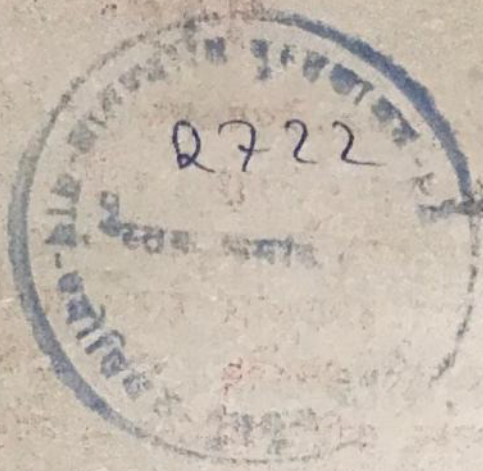
ऋक्, यजुः, साम और अथर्व ये चार वेद संहिताएँ हैं और ईश्वरीय ज्ञान हैं, इसे महर्षि दयानन्द जी महाराज तथा अन्यान्य विद्वान् भी मानते हैं ❋।

परन्तु बहुत से विद्वानों को 'अथर्व वेद' के वेद होने में सन्देह है। उनका कथन है कि वेदों के लिए त्रयी शब्द आया है और वेद तीन ही हैं, अथर्व वेद अर्वाचीन है।

यथा—'...त्रयो वेदा अजायन्त' (ऐतरेय ब्रा० २५।७)

'त्रयो वेदा अजायन्त अग्नेर्ऋग्वेदो वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात्सामवेदः'

[शतपथ ब्रा० ११।५।८]

अर्थात्—तीन वेद उत्पन्न हुए, अग्नि से ऋग्वेद, वायु से यजुर्वेद तथा सूर्य से सामवेद।

'अग्नेर्ऋचो वायोर्यजूँषि सामान्यादित्यात्। स एतां त्रयीं विद्यामभ्यतपत्'

[छान्दोग्योपनिषद् ४।१६।२]

❋ देखो-मेरा 'पाश्चात्यों की दृष्टि में वेद अपौरुषेय है' शीर्षक लेख, मासिकपत्र 'क्षात्रधर्म-सन्देश' जयपुर, फरवरी से जुलाई तक १९४४ई० में प्रकाशित—लेखक।

त्रयी विद्या की उत्पत्ति इस प्रकार हुई–अग्नि से ऋग्वेद, वायु से यजुर्वेद, आदित्य से सामवेद ।

'अहे बुध्नियमन्त्रं मे गोपाय यमृषयस्त्रैविदाः विदुः । ऋचः सामानि यजूंषि' । [तैत्तिरीय ब्रा० ३।२।२६]

यहाँ भी तीन वेदों के जानने वाले ऋषि, ऐसा कहकर ऋक्, यजु, साम, इस प्रकार उन तीनों का नाम भी ले लिया है ।

'तेभ्यः श्रान्तेभ्यस्तप्तेभ्यः सन्तप्तेभ्यस्त्रीन् वेदान् निरमिमत् ।'

[गोपथब्रा० पू० १।६]

श्रान्त एवं सन्तप्त तीन देवों से तीनों वेदों का निर्माण हुआ ।

'स यावतीयं त्रयी विद्या तावत् ह स जयति'

[बृहदारण्यकोपनिषद् ४।१२।२]

जितनी ऋक्, यजु, सामरूप त्रयी विद्या है वह इन सबको जीत लेता है ।

'यदेनमृग्भिः शंसन्ति, यजुर्भिर्यजन्ति, सामभिः स्तुवन्ति'

[निरुक्तपरिशिष्टम् अ० १३।७]+

ऋग्वेद से जिसकी प्रशंसा करते हैं, यजुर्वेद से यज्ञ करते हैं एव सामवेद से स्तवन करते हैं ।

'यस्मिन्नृचः साम यजूंषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः'

[यजु० ३४।६].

जिस मनमें ऋक्, साम तथा यजु रथ की नाभि में अरों की तरह प्रतिष्ठित हैं ।

यहाँ भी तीन ही वेदों का वर्णन हैं ।

+अनेक विद्वान् निरुक्त परिशिष्ट को प्रक्षिप्त मानते हैं । उनके मत में १२ अध्याय ही निरुक्त है । उसका कारण देते हैं कि—निरुक्त निघण्टु का भाष्य है और निघण्टु की व्याख्या १२ अध्यायों में पूरी हो गई है । निघण्टु के भाष्यकार श्री देवराज यज्वा, दुर्गाचार्य भी १२ वें अध्याय तक मानते हैं । 'ऋक् संहिता भाष्य की भूमिका' में सायणाचार्य ने भी १२ अध्याय तक माना है—विद्वान् इस पर विचार करें —लेखक ।

'अग्निहोत्र त्रयी विद्या' (महाभारत १।१००।३६)

'न सामऋग्यजुर्वर्णाः' (महाभारत ३।१५०।१३)

वेदव्यास कृत महाभारत में भी त्रयी अथवा तीन वेदों का ही नाम है।

'अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम् ।
दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थमृग्यजुःसामलक्षणम् ॥'

[मनुस्मृति १।२।३]

अग्नि, वायु तथा रवि से यज्ञसिद्धि के लिये ऋक्, यजु तथा साम ये तीन वेद उत्पन्न हुए।

कतिपय प्रतीच्य विद्वान् भी अथर्ववेद को अर्वाचीन मानते हैं। यथा—

'यूरोपीय पण्डितों के मत से अथर्ववेद का कोई २ अंश अति प्राचीन और कोई २ अंश आधुनिक है जो ऋग्वेद के दशम मण्डल बनने के बाद रचा गया था' +।

अध्यापक रोथ अपनी अथर्ववेदीय-आलोचना नामक पुस्तक में कहते हैं:—

'इसका कितना ही प्रमाण मिलता है कि यह वेद अन्य सकल वेदों के अन्त में प्रकाशित हुआ है'÷।

अब हम इस पूर्वपक्ष पर ऊहापोह से विचार करते हैं।

त्रयी शब्द का वास्तविक अर्थ

जो लोग त्रयी शब्द से तीन वेदों का ग्रहण करते हैं वे भारी भ्रम में हैं। त्रयी शब्द का अर्थ यह नहीं कि वेद तीन हैं, वरन् वेद के मन्त्रों को और अर्थों को तीन भागों में बाँटने के लिए ही वेद को त्रयी कहा गया है।

+ अमेरिकन ओरियेंटल सोसायटी के जर्नल, वाल्यूम ३ पृष्ठ ३०५; पृष्ठ १५५ पर छिपने के निबन्ध। मैक्समूलरकृत ऐन्श्येंट संस्कृत लिट्रेचर पृष्ठ ३८, ४४६।

÷ 'हिन्दी विश्वकोष' द्वाविंशभाग, पृष्ठ ३०५ कालम १ (सन् १९३० ई० कलकत्ता संस्करण)।

चारों वेदों के मन्त्र गद्यात्मक पद्यात्मक और गानात्मक ही हैं। पद्यात्मक भाग का ही दूसरा नाम ऋक् है। इस प्रकार का भाग जिसमें अधिक है उसे ही ऋग्वेद कहा जाता है। गद्य का ही दूसरा नाम यजु है। गद्यात्मक भाग की अधिकता से यजुर्वेद यह नाम पड़ा है। गान का ही दूसरा नाम साम है, उसी की प्रचुरता से सामवेद यह नाम हुआ। क्योंकि चारो वेदों को स्वभावतः इन तीन भागों में ही विभक्त किया जा सकता है, अतः चारो वेदों को ऋक्-यजु-साम लक्षण अथवा त्रयी कहा जाने में काई हानि नहीं। इसलिये जहाँ त्रयी अथवा त्रय एवं ऋक् यजु-सामलक्षण इत्यादि शब्द आये हैं वहाँ उपर्युक्त ही तात्पर्य है *।

ऋषियों ने ऐसा हीअर्थ किया है। यथा :—

तेषामृग् यत्रार्थवशेन पादव्यवस्था'

[मीमांसादर्शन २।१।३२]

जिन मन्त्रों में पादव्यवस्था है, जो मन्त्र छन्दोबद्ध हैं उन्हें ही ऋग् मन्त्र कहा जाता है।

'गीतिषु सामाख्या" [मीमांसा द० २ । १ । ३३]

जो मन्त्र गानात्मक हैं, उन्हें ही साम मन्त्र कहा जाता है।

'शेषे यजुः शब्दः [मीमांसा २ । १ । ३४]

शेष गद्यात्मक भाग को ही यजु कहा जाता है।

'सर्वानुक्रमणो वृत्ति' की भूमिका में षड् गुरुशिष्य कहते हैं:—

'विनियोक्तव्यरूपश्च त्रिविधः स प्रदर्श्यते।
ऋग्यजुःसामरूपेण मन्त्रो वेदचतुष्टये ॥ १ ॥
अहे बुध्नियमन्त्र मे गोपायेत्यभिधीयते।
चतुर्ष्वपि हि वेदेषु त्रिधैव विनियुज्यते ॥ २ ॥'

---

* श्री नगेद्र नाथ वसु 'प्राच्यविद्यामहार्णव' शब्दरत्नाकर, तत्त्व-चिन्तामणि, का मत है-'कुछ लोगोंका कहना है, वेदरचनामें गद्य, पद्य और गान ये तीन तरह की प्रणाली अवलम्बित है, इससे इसका नाम 'त्रयी' है"

[हिन्दी विश्वकोष, द्वाविंश भाग पृष्ठ १०० ,कालम २]

अर्थात्—यद्यपि वेद चार हैं तथापि पद्य, गान और गद्य रूपमें वेद मन्त्रों का त्रिधा भेद किया जाता है। अतः वेद को त्रयी कहने से यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि वेद तीन ही हैं।

वेदत्रयी शब्दप्रयोग के कई अभिप्राय हैं। एक तो यज्ञ का कर्मकाण्ड प्रथम तीन वेदों से किया गया और चतुर्थवेद के ज्ञाता ब्रह्मा का यज्ञमें कोई बिधान नहीं है। वह केवल साक्षीमात्र मौन होकर रहता है अतः यज्ञ कर्म के सम्बन्ध में तीन वेदों का ही उल्लेख किया जाता है। १

व्याकरण के नियमानुसार अथर्व का नाम अन्त में ही आता है— [अल्पाच्तरम् अष्टाध्यायी २।२।३४] जिन शब्दों में कम स्वर रहते हैं, वे पूर्व ही आ जाते हैं। अथर्व शब्द में सबसे अधिक स्वर हैं इसलिये यह सबके अंतमें रहेगा ही। इसलिये त्रयी के तीन की गिनती एक तरफ से करना ठीक नहीं है ......।२

त्रयी विद्या का अभिप्राय तो ज्ञान,कर्म और उपासना है। ज्ञान-कर्म-उपासना ही का वर्णन चारों वेदों में आता है इसलिये चारो वेद त्रयी विद्या कहलाते हैं। ३

त्रयी वै विद्या ऋचो यजूंषि सामानि इति

[शतपथ ब्रा० ४।६।७।१]

अर्थात्—त्रयी नाम ऋग्-यजुः-साम का विद्या के कारण है।

चारों ही वेद त्रयीविद्या के नाम से व्यवहृत होते हैं। महर्षि वेदव्यास जी कहते हैं:—

---

१. देखो—चतुर्वेदभाष्यकार पं० जयदेव शर्मा विद्यालङ्कार मीमांसातीर्थकृत अथर्ववेदसंहिता भाषाभाष्य प्रथमावृत्ति भूमिका पृष्ठ १.

२. देखो—मासिक पत्रिका गंगा का वेदाङ्क प्रवाह २ जनवरी १९३२ ई० तरंग १, पृष्ठ २२० कालम १ में प्रकाशित पं० वाराणसी प्रसाद त्रिवेदी एम० ए० एल-एल० बी० काव्यतीर्थ सांख्यतीर्थ का अथर्ववेद शीर्षक लेख।

३. देखो—पं० रघुनन्दन शर्मा साहित्यभूषणकृत वैदिक सम्पत्ति द्वितीय संस्करण पृष्ठ ५५३.

त्रयीविद्यामवेक्षेत वेदे सूक्तमथाङ्गतः ।
ऋक्सामवर्णाक्षरता यजुषोऽथर्वणस्तथा ॥

[महाभारत शान्तिपर्व श्लोक १६५]

अर्थात्—तीन विद्याओं का अवलोकन करना चाहिए व तीन विद्या ऋग्, यजु, साम तथा अथर्व रूप हैं।

छान्दोग्य ब्राह्मणादि जिन ग्रन्थों में जहाँ तीन वेद हैं वहाँ अन्य स्थलों में चार का भी वर्णन है। यथा—

ऋग्वेदं विजानाति यजुर्वेदं सामवेदमाथर्वण चतुर्थम् ॥२॥

[छान्दोग्योपनिषद् ७।७]

यहाँ चारों वेदों का उल्लेख है।

अथर्व के निगद, ब्रह्म, अथर्व और छन्द नाम वैदिक साहित्य में मिलते हैं। यथा—

चत्वारो वा इमे वेदा ऋग्वेदो यजुर्वेदो ब्रह्मवेदः

[गोपथ ब्रा० २।१६]

यहाँ अथर्ववेद को ब्रह्मवेद कहा गया। †

निगद नाम इसकी सरलताके कारण पड़ा है। यथा—

निगदो वा चतुर्थं स्याद् धर्मविशेषात् ❋

अर्थात् विशेषता के कारण ही निगदनामक चतुर्थ वेदका अस्तित्व है। अथर्ववेद १८।४।२४ में लिखा हुआ है कि—

"ऋचः सामानि छन्दांसि पुराणं यजुषा सह"

इस मन्त्रमें ऋग्, यजु तथा साम के साथ अथर्व को छन्दांसि कहा है।

यत्र ब्रह्मा पवमानश्छन्दस्यां वाचं वदन्

[ऋ० ९।११३।६]

अर्थात्—जहाँ यज्ञ में ब्रह्मा छन्दवाणी बोलता है।

---

† ह्विटनी ने भी ब्रह्मको अथर्ववेद कहा है।

❋ वैदिक सम्पत्ति द्वितीय संस्करण पृष्ठ ५५४ में उद्धृत मीमांसा दर्शन का प्रमाण।

यज्ञ में ब्रह्मा अथर्ववेद से ही नियुक्त होता है। यही बात इस ऋचामें कही गई है। ऋचा कहती है ब्रह्मा छन्दवाणी बोलता है। इसका तात्पर्य यह है कि ब्रह्मा अपने अथर्ववेद का पढ़ता है। अतएव छन्द अथर्ववेद ही है।

ऋचः यजूंषि सामानि, छन्दांस्याथर्वणानि च।
चत्वारस्त्वखिला वेदाः सरहस्याः सविस्तराः ॥ [हरिवंश पुराण]

यहाँ ऋग्,यजुः, साम के साथ 'छन्दांसि अथर्व' कहा गया है जिससे स्पष्ट प्रकट होता है कि अथर्व वेद का ही नाम छन्दवेद है।

महर्षि पाणिनि जी ने भो अथर्व वेद का वर्णन किया है। यथा—

अथर्वणिकस्यैकलापश्च [पा॰ ४।३।१३३]

इस सूत्र से ज्ञात होता है कि पाणिनि को अथर्ववेदका भी ज्ञान था।

शाकलाद्वा [पा॰ ४।३।१२८] और शौनकादिभ्यश्छन्दसि (पा॰-४।३।१०५)

दोनों ही सूत्रों में ऋग्वेद और अथर्ववेद की शाखाओं का वर्णन है।

तथा—काश्यपकौशिकाभ्यां गिनिः [४।३।१०३]

इससे ज्ञात होता है कि अथर्व वेद पर कौशिक सूत्र का भी पाणिनि को ज्ञान था।

यामथर्वा मनुष्पिता दध्यङ् धियमतन्वत

(ऋ॰ १।८०।१६)

आथर्वणायाश्विना दधीचे

(ऋ॰ १।११७।२२)

यहाँ अथर्व वेद के ऋषि का नाम मौजूद है।

श्री सायणाचार्य भी अपनी-ऋग्भाष्यभूमिका में लिखते हैं:—

एतमेव मन्त्राऽवान्तरविशेषमुपजीव्य वेदाना ऋग्वेदो यजुर्वेद सामवेद इति त्रैविध्यं समान्नमिति।

अर्थात्—इसी गद्य-पद्य-गानात्मक विशेषता से ही वेदों के तीन भेद हो गए हैं।

पं० सत्यव्रत सामश्रमी लिखते हैं:—

"नैतन्मतमस्मन्मनोहरम् नापि विचारसहम् निर्मूलत्वात् । न क्वापि वेदे लोके वा तादृशम् तस्य किञ्चिदपि मूलं कथमपि दृश्यतेऽनुमातु वा शक्यते । त्रयीति नाम्ना वेदस्य व्यवहार एवात्र · निदानमिति चेत्, अस्मदुक्तत्रयी-नामकरणमेव तत्सहारतया सदैव जागर्ति । सत्स्वपि चतुर्ष्वपि वेदेषु रचना-त्रयभेद-निबन्धनं तेषु त्रयित्वमव्याहतमेव" । ÷

अर्थात्—त्रयी शब्द से चारों वेदों की तीन प्रकार की रचना से तात्पर्य है ।

ब्रह्म प्रजापतिर्धाता लोका वेदाः सप्त ऋषयोऽग्नयः

[अथर्व० १९।९।१२]

इस मन्त्र में आये हुए "वेदाः" इस बहुवचनान्त पद का भाष्य करते हुए श्री सायणाचार्य जी लिखते हैं:—

वेदाः साङ्गाश्चत्वारः

अर्थात्—वेद सम्पूर्ण चार हैं । ज्ञान, कर्म, उपासना और विज्ञान-भेद से वेद के चार विभाग ऋक् यजुः साम अथर्व नाम से सृष्टि के आदि में प्रसिद्ध हुए ।

ऋचन्ति स्तुवन्ति पदार्थानां गुणकर्मस्वभावाननया सा ऋक् ।

पदार्थोंका गुण, कर्म, स्वभाव बतानेवाला ऋग्वेद है ।

यजन्ति येन मनुष्या ईश्वरं, धार्मिकान् विदुषश्च पूजयन्ति, शिल्पविद्यासङ्गति-करणं च कुर्वन्ति, शुभविद्यागुणदानं च कुर्वन्ति तद् यजुः ।

अर्थात्—जिससे मनुष्य ईश्वर से लेकर पृथ्वी पर्यन्त पदार्थों के ज्ञान से धार्मिक विद्वानों का संग शिल्पक्रियासहित विद्याओं की सिद्धि श्रेष्ठ विद्या श्रेष्ठ गुणों का दान करें वह यजुर्वेद है ।

'स्यति कर्माणीति सामवेदः' जिससे कर्मोंकी समाप्ति द्वारा कर्मबन्धन छूटें वह सामवेद है ।

÷ निरुक्तालोचन पृष्ठ १४८

थर्वतिश्चरतिकर्मा तत् प्रतिषेधः। [निरुक्त० अ० ११ स० १८]
चर संशये [चुरादिः], संशयराहित्यं सम्पाद्यते येनेत्यर्थकथनम्।

अर्थात्—जिसके द्वारा संशयों की निवृत्ति हो उसे अथर्व वेद कहते हैं।

ऋग्भिः शंसन्ति, यजुर्भिर्यजन्ति, सामभिः, स्तुवन्ति अथर्वभिर्जपन्ति—

[काठक सं० ४०।७]

सब पदार्थों के गुणों का निरूपण ऋग्वेद करता है।

ऋग्भिः शंसन्ति का अभिप्राय है पदार्थों के लक्षण बताना और उनका शासन करना ही है।

वस्तु के ज्ञान हो जाने के पश्चात् उसको कार्य रूपमें परिणत करने की क्रिया का नाम कर्मकाण्ड है जो यजुर्वेद का प्रधान विषय है।

यह सब हो जानेपर विशिष्ट ज्ञान प्राप्त करने का नाम विज्ञान है जो अथर्व वेद का विषय है।

तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः...'

[मुण्डकोपनिषद् १।१.५].

चत्वारो वेदाः साङ्गाः सरहस्या बहुधा भिन्ना
एकशतमध्वर्युशाखाः सहस्रवर्त्मा सामवेद
एकविंशतिधा बाह्वृच्यं नवधाथर्वणो वेदः...'

[महाभाष्य पस्पशाह्निक पृष्ठ ६५]

"चत्वारि शृङ्गा" [ऋ० ४।५८।३] के व्याख्यान में यास्काचार्य लिखते हैं:—

चत्वारि शृङ्गेति वेदा वा एत उक्ताः।

[निरुक्त १३।७]

यहाँ यास्क ने चारों वेदों का ग्रहण किया है।

ऋग्वेद के निम्न मन्त्रों से प्रतीत होता है कि यज्ञमें अथर्ववेद का प्राधान्य है—

'यज्ञैरथर्वा प्रथमः पथस्तते' **[ऋ० १।८३।५]**

अग्निर्जातो अथर्वणां [ऋ० ७।७।४।५]
त्वामग्ने पुष्करादध्यथर्वा निरमन्थत [ऋ० ४।५।२३।३]

ह्विटनी, रोथ, मेक्डानल प्रभृति प्रतीच्य विद्वान् अथर्व वेद को अर्वाचीन मानते हैं जो उनकी गहरी भूल है।

देखिये—प्रतीच्य विद्वान् प्रोफेसर कर्न लिखते हैं:—

'कभी कभी यह समझना कठिन हो जाता है कि नये और पुराने का तात्पर्य क्या है। यथा ऋग्वेद की अपेक्षा अथर्ववेद नया कहा जाता है; यह एक अन्धविश्वास हो गया है जिसको कुछ लोग समीक्षकों के आधार पर स्वीकार करते हैं। अथर्व में आधे के लगभग सूक्त वही हैं जा कि ऋग्वेद के हैं; और अथर्व के अवशिष्ट भाग को पीछे का बना तभी कहा जा सकता है, जब कि भाषा या वाक्य के संगठन के आधार पर कोई युक्ति हो। पर जहाँ तक मुझे मालूम है आज तक किसी ने ऐसा उद्योग नहीं किया। ÷

इन सब उपर्युक्त प्रमाणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि अथर्ववेद अर्वाचीन नहीं है वरन् ऋक् यजु-साम के सदृश ही यह ईश्वरीय ज्ञान है।

अथर्ववेद और जादू-टोना

कुछ विद्वान् अथर्ववेद में मारण मोहन उच्चाटन वशीकरण, जादू-टोना प्रभृति दिखलाकर इसकी अर्वाचीनता सिद्ध करते हैं। यथा—

प्रतीच्य विद्वानों के विचार—

प्रोफेसर मैकडोनेल संस्कृत के और वैदिक साहित्य के अच्छे विद्वान् थे, पर उनकी सम्मति में अथर्ववेद में बीमारियों आदि के हटाने के लिये जादू टोने के अतिरिक्त कुछ नहीं है। ❋

÷ देखो—पं० कपिलदेव एम. ए. शास्त्री एम. ओ. एल. कृत संस्कृत विद्याका इतिहास प्रथमावृत्ति पृष्ठ ५-६

❋ मैकडानलकृत संस्कृत लिट्रेचर पृष्ठ १९९

पण्डित विन्टनीज़ की सम्मति में अथर्ववेद में जादू टोना भरा पड़ा है और इसका विस्तार से उन्होंने प्रदर्शन किया है।❀

पण्डित जे. एन. फरकुहर की सम्मति में अथर्ववेद बना ही पुरोहितों की शिक्षा के लिये और उनको जादू सिखलाने के लिये। †

मिस्टर मूर की सम्मति में अथर्ववेद में जादू टोना आदि प्रचुर हैं पर फिर भी आत्मा आदि पर उसमें दार्शनिक विचार हैं। +

अथर्ववेद काण्ड १. सूक्त ७ और ८ को ग्रीफ्रिथ ने लिखा है कि यह सूक्त भूत, प्रेतोंको नाश करने के लिये हैं।

ह्विटनी ने इस सूक्त का शीर्षक लिखा है 'सोर्सरर्स' अर्थात् जादूगरों के पता लगाने के लिये अग्नि की प्रार्थना।

'सोर्सरज़' अर्थात् जादू टोने चलाने वालों के पता लगाने के लिये अग्नि से प्रार्थना यह ह्विटनी को अभिप्रेत है।

कुछ प्राच्य विद्वानों के विचार

भाष्यकार सायणाचार्य जी ने अथर्ववेद में जादू, टोना आदि का वर्णन किया। उसके पश्चात् उनके अनुगामी प्रतीच्य विद्वानों ने भी उन्हीं की बातों का समर्थन किया जैसा कि ऊपर प्रदर्शित किया गया है।

अथर्ववेद काण्ड १. सूक्त ७-८ पर कौशिक ने लिखा है:--चा नानाम् अपनोदनेन व्याख्यातम्। चातन सूक्तों का प्रयोग अपनोदन सूक्तों के समान समझना चाहिए।

इस पर श्री सायणाचार्य जी लिखते हैं:—

आविष्टभूतपिशाचाद्युच्चाटनार्थं फलीकरणतुषावतक्षणहोमादीनि इत्यपनोदनसूक्तकर्तव्यानि अपनोदनानि कर्माणि अनेन गणेन कुर्यात्।

❀ विन्टर्निट्ज़कृत हिस्ट्री आफ़ इण्डियन लिट्रेचर पृष्ठ १४७।

† ऐन आउटलाइन आफ़ दि रिलीजस लिट्रेचर आफ़ इण्डिया पृष्ठ २१.

+ देखो—मासिकपत्र वैदिकधर्म 'औंध, वर्ष २७ अप्रैल १९४६ ई० अंक ४. पृष्ठ १४० १४१ में प्रकाशित मेरा जादू विद्या-रहस्य शीर्षक लेख—लेखक

अर्थात्—पुरुष शरीर में घुसे भूत, पिशाचों के उच्चाटन करने के लिये चातनगण में पढ़े सूक्तों का विनियोग अपनोदन सूक्त के विनियोग के समान जान कर तुष या भूसी कूटना और होम आदि करना चाहिये।

श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य एम. ए. की सम्मति है—'अथर्ववेद के सूक्त प्रायः जादू टोने से भरे हुये हैं।' १

दासगुप्ता ने मैक्डोनेल का ही एक उद्धरण देकर अथर्व को जादू से भरा करार दे दिया है। २

श्री राधाकृष्णन् जी लिखते हैं:—'अथर्ववेद का धर्म प्रारम्भिक लोगों का है, जिनके लिये संसार अमूर्त भूतों और मरे लोगों की आत्माओं से भरा पड़ा है। जब वह प्राकृतिक शक्तियों के विरुद्ध असहाय पाता है, तो वह संसार को भूत योनियों से भरा समझ लेता है, जो असन्तुष्ट होने पर मौत, वीमारियाँ, वर्षा आदि का न होना लाती हैं। अथर्ववेद असुर-गाथाओं से भरा पड़ा है।' ३

भट्टाचार्य ने कहा है—

'शान्तिपुष्ट्यभिचारार्था एकब्रह्मर्त्विगाश्रयाः।
क्रियन्तेऽथर्ववेदेन त्रय्येवात्मीयगोचराः॥' ४

अर्थात्—शान्ति, पुष्टि और अभिचार [शत्रु का मारण, मोहन, उच्चाटन आदि] फल के लिये, अकेले ब्रह्मा ऋत्विन् के सहारे अथर्व से यज्ञ किये जाते हैं जैसे त्रयी [ऋक्, यजु, साम] से उनमें आये यज्ञ।

यजुर्वेद भाष्यकार, विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसादमिश्र, मुरादावादी, अथर्ववेद काण्ड ८, सूक्त ५, प्रपाठक १८ का प्रमाण देकर भूत, प्रेतादि अथर्ववेद में मानते हैं। ५

---

१. श्री सी. वी. वैद्यकृत 'हिस्ट्री आफ संस्कृत लिट्रेचर' पृष्ठ १६७

२. श्री दासगुप्ताकृत हिस्ट्री आफ इण्डियन फिलासफी' पृष्ठ १२

३. श्री राधाकृष्णन् कृत 'इण्डियन फिलासफी' भाग १, पृष्ठ ११९-१२२

४. 'अथर्ववेद संहिता भाषा-भाष्य' पं० राजाराम शास्त्रीकृत, प्रथमभाग, प्रथम संस्करण, भूमिका पृष्ठ ५

५. देखो—'दयानन्द-तिमिर-भास्कर' तृतीय संस्करण, पृष्ठ १७.

श्री देवराज अपनी पुस्तक में लिखते हैं:—'अथर्ववेदके मन्त्रों में जादू-टोने और मन्त्र-तन्त्र की बातों का बाहुल्य है परन्तु यहाँ भी आर्यों का प्रभाव स्पष्ट है। बुरे जादू की निन्दा और अच्छे प्रयोगों की प्रशंसा की गई है।······

अथर्ववेद के समय में आर्य लोग अनार्य लोगों को उनके विश्वासों और धार्मिक भावनावों सहित आत्मसात् करने की चेष्टा कर रहे थे। इस काल में भूतों, प्रेतों, वृक्षों और पर्वतों की पूजा आर्य लोगों में शुरू होने लगी। कुछ हिन्दू देवताओं की उत्पत्ति आर्य और अनार्य धर्मों के सांकर्य मेल) से हुई है।' १३

श्रीमद् भागवतप्रसाद वर्मा, सिअरुआँ, संझौली, शाहाबाद अपने 'वैदिक संहिताओं का सिंहावलोकन' शीर्षक लेख + में लिखते हैं:—'अथर्ववेद संहिता–इसके अधिकांश मन्त्र इन्द्रजाल, रोग-निवारण, शत्रु विनाश आदि के हैं। इसके कुछ मन्त्र प्राचीन हैं अवश्य किन्तु इनके विशेष महत्त्व की दृष्टि से न देखे जाने के कारण ही सम्भवतः व्यास ने इस वेद का संग्रह नहीं किया पिप्पलाद इसके प्रथम संकलन कर्त्ता हैं। उन्होंने उपर्युक्त प्रकार से स्फुट मन्त्रों का संग्रह किया; और ऋग्वेदसे कुछ मन्त्र चयन करके एक संहिता तैयार की। अथर्ववेद का पूर्व नाम अथर्वाङ्गिरस था। आङ्गिरसों को वैदिक काल में भयंकर ऐन्द्रजालिक कहा करते थे। ऋ० १०।१०८।१०' +

---

१३. देखा—'भारतीय दर्शन शास्त्र का इतिहास' प्रथम संस्करण' पृष्ठ ५६, ५७,

+अनेक भारतीय विद्वान्, पं बलदेव उपाध्याय एम. ए. पण्डित जयचन्द्र विद्यालंकार तथा समस्त पौराणिक वर्ग प्रभृति वेदों को व्यास सङ्कलित मानते हैं जो उनकी भारी भूल है। वैदिक गवेषक पण्डित भगवद्दत्त जी बी. ए. ने अपने वैदिक वाङ्मय का इतिहास प्रथम भाग, प्रथम संस्करण, पृष्ठ ५५-५६ में इस मत का स्पष्ट प्रतिवाद किया है। महर्षि दयानन्द जी महाराज ने भी अपने 'सत्यार्थप्रकाश' एकादश समुल्लास में इसका विरोध किया है—लेखक।

१४. सचित्र मासिक पत्रिका 'गंगा' का वेदांक प्रवाह २ जनवरी सन् १९३२ ई०, तरंग १, पृष्ठ २४३, कालम २.

मा० सम्पूर्णानन्द जी महोदय अपने 'अथर्ववेद का परिचय' शीर्षक लेख में लिखते हैं:—'मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण-सभी प्रकार के अभिचारों से पुस्तक भरी है'—(देखो—काशी विद्यापीठ रजतजयन्ती अभिनन्दनग्रन्थ पृष्ठ १३, बसन्त पञ्चमी संवत् २००३ वि० में भार्गव भूषण प्रेस, काशी द्वारा मुद्रित]

पं० बलदेव उपाध्याय एम. ए. साहित्याचार्य प्रोफेसर, संस्कृत तथा पाली विभाग, हिन्दू-विश्वविद्यालय, काशी लिखते हैं:—'अथर्ववेद में यज्ञ भागों का सम्बन्ध बहुत ही कम है। इसमें मारण, मोहन, उच्चाटन आदि क्रियाओं का विशेष वर्णन है।' +

रायबहादुर महामहोपाध्याय गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझा, साहित्य-वाचस्पति, डी. लिट् का मत है—'अथर्व वेद में अभिचार, सम्मोहन, पीडन, वशीकरण, मारण आदि का वर्णन है। राजा के पुरोहित अथर्ववेद के विद्वान् होते थे। शत्रुओं को नष्ट करने के लिये राजा जादू और टोनों का भी प्रयोग कराते थे।' +

गुरुकुल काङ्गड़ी के प्रसिद्ध स्नातक, भारतीय इतिहास मर्मज्ञ पं० जयचन्द्र विद्यालङ्कार * अपने ग्रन्थ में लिखते हैं:—'साधारण जनता में जादू-टोना, कृत्या और अभिचार विषयक विश्वास प्रचलित थे, जिनका संग्रह हम अथर्ववेद में पाते हैं। लोकमान्य गङ्गाधर तिलक के मत में अथर्ववेद के मन्त्र-तन्त्र तथा काल्दी लोगों के जादू टोने में परस्पर सम्बन्ध था।' १

+. संस्कृत साहित्य का इतिहास' प्रथम संस्करण, पृष्ठ २४; 'आर्य संस्कृति के मूलाधार' प्रथम संस्करण, पृष्ठ २४.

+. 'मध्यकालीन भारतीय संस्कृति' पृष्ठ ५० (सन् १९४५ ई० में हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद से प्रकाशित)

* प० जयचन्द्र विद्यालंकार, गुरुकुल के स्नातक होते हुये भी अथर्ववेद में जादू-टोना, गोमांसभक्षण आदि मानते हैं—इसका मुझे हार्दिक दुःख है।—लेखक

१. भारतीय इतिहास की रूपरेखा प्रथम जिल्द, द्वितीय संस्करण पृष्ठ १४४ तथा भारतीय वाङ्मय के अमररत्न प्रथम संस्करण पृष्ठ १०

वैदिकमुनि स्वामी हरिप्रसाद जी लिखते हैं:—'प्राचीन साहित्य के रूप में परम्परा से प्राप्त थोड़े मन्त्रों में बहुत अधिक ऋचा मन्त्रों को मिलाकर और 'ऐतश प्रलाप' इत्यादि घृणित तथा व्यर्थ अनेकों ग्रामीण वाक्यों का सम्मिश्रण करके अथर्ववेद संहिता तय्यार की गई'। १८

श्री विद्यानिधि सिद्धेश्वर शास्त्री, चित्राव, पूना अपने 'वेदों और उपवेदों का परिचय' शीर्षक लेख में लिखते हैं:—१९

अथर्ववेद...इस संहिता में तत्त्वज्ञान के मन्त्रों के साथ साथ अभिचार, मन्त्रतन्त्र, जादू-टोना, वशीकरण, गण्डे, तावीज आदि के भी मन्त्र पर्याप्त हैं। ये सिद्ध मन्त्र होने से कौशिक सूत्रों में उनके अनुष्ठान करने की विधि भी सविस्तार बतलाई गई है।

राबराजा डाक्टर श्यामबिहारी मिश्र, डी. लिट्. तथा राय बहादुर पंडित शुकदेवविहारी मिश्र लिखते हैं।

अथर्ववेदमें वे टोना टनमनों आदि पर भी बहुतायत से विश्वास करते थे और भूत, प्रेतों का भी भय मानते थे।...स्त्रियों का वर्णन इसमें कम है तथा झाड़ने फूँकने के मन्त्र बहुत से हैं। †

जादू-टोना नहीं है, वैज्ञानिक प्रयोग हैं।

अब हम इस पूर्वपक्ष की समालोचना करते हैं।

जो लोग अथर्ववेद में मारण, मोहन, उच्चाटन, तन्त्र, जादू का वर्णन बतलाते हैं वे भारी भ्रम में हैं।

इन्हीं जादू, मोहन, वशीकरण को देखकर कई विद्वान् अथर्ववेद को म्लेच्छ वेद कुरान का अंश मानते हैं।

---

१८. 'स्वाध्याय' पृष्ठ ३-५; 'सार्वदेशिक' वर्ष १३ मार्च १९४१ ई० अङ्क १, पृष्ठ ३२. वेदोंमें 'प्रक्षेप' शीर्षक लेख।

१९. मासिक पत्र वैदिकधर्म औंध वर्ष १९ जनवरी १९३८ ई० अङ्क १ पृष्ठ ३३ कालम २

† देखो—'बुद्धपूर्वका भारतीय इतिहास' प्रथमभाग तृतीय संस्करण पृष्ठ १४०-१४१

श्री नगेन्द्रनाथ वसु प्राच्यविद्यामहार्णव, तत्त्वचिन्तामणि, शब्दरत्नाकर एम. आर. ए. एस. लिखते हैं:–'अनेक लोग अनुमान करते हैं कि अथर्ववेद तो म्लेच्छोंका वेद है तथा ब्राह्मण कभी इस वेद का आदर न करते थे। किन्तु यह भ्रान्त सिद्धान्त है। वास्तविक रूप से यह म्लेच्छों का वेद नहीं'। १

आचार्य पं० सत्यव्रत सामश्रमी अपने वैदिक गवेषणा नामक ग्रन्थ में लिखते हैं:—

'अथर्ववेदको कुरान के अंश बताने का कारण भी मौजूद है। अथर्ववेद के जिस जिस अंश में चिकित्सासम्बन्धी प्रस्ताव लिखा है उसे सिन्धुनद और कास्पियन सागर पारवासी यावनिक जाति ने सीखा था। सागर पार स्थित अनेक उद्भिद् और फल फूलों की बात अथर्ववेद में मिलने से इसे लोग यावनिक बता अश्रद्धेय समझते हैं। किन्तु वास्तविक अथर्ववेद कुरानका अंश नहीं। जब कुरान बना भी न था जब मुहम्मद का नाम तक न सुना गया था तभी अथर्ववेद की सृष्टि हो गई थी।' २

जहाँ तक मैंने 'अथ०विद' का स्वाध्याय किया है, मुझे कहीं भी मारण, मोहन, उच्चाटन, जादू का वर्णन नहीं मिला है।

सर्वप्रथम सायण ने इस प्रकार की बात लिखी और उनके अनुगामी प्रतीच्य विद्वानों ने वही बात लिखी जो सायणने कही थी। श्री चिन्तामणि वैद्य, श्री राधाकृष्णन्, प० बलदेव उपाध्याय, पं० जयचन्द्र जी, श्री आझा प्रभृति विद्वानोंने भी प्रतीच्य विद्वानों के लेखों की अनुकृति की है।

चतुर्वेदभाष्यकार पं० जयदेव शर्मा विद्यालङ्कार, मीमांसातीर्थ ने इसपर गवेषणापूर्ण विचार किया है और यह बतलाया है कि अथर्ववेद में किसी भी प्रकार का जादू टोना आदि नहीं है। ३

१—२. हिन्दी विश्वकोष प्रथमभाग पृष्ठ २९९ तथा ३०५-३०६.

३. देखा—'अथर्ववेद संहिता भाषा भाष्य' प्रथम खण्ड, प्रथमावृत्ति, भूमिका पृष्ठ २३ से ३४ तक तथा 'अथर्ववेद और जादू टोना' नामक ट्रैक्ट विक्रमाब्द १९८३ में महेश पुस्तकालय, अजमेर से प्रकाशित।

प० गङ्गाप्रसाद एम० ए० कहते हैं:—'लोगोंका विचार है कि अथर्ववेद में राक्षसों, जादूगरों, स्यानों,या ओझाओं, मोहन, मारण और उच्चाटन करनेवालों, तावीज, गण्डा आदि पहननेवालों या झाड़फूँक करनेवालोंका वर्णन है। हमारा विचार सर्वथा इससे विपरीत है। हम अथर्ववेदको भी उसी प्रकार की धार्मिक पुस्तक मानते हैं, जैसे ऋग्वेद तथा अन्य वेदों का। 'आसुरीमाया' कहने मात्र से आजकल लोग राक्षसों के मायाजाल का ही अर्थ समझते हैं! कम से कम उस समय तक, जब उव्वट या महीधर ने यजुर्वेद का भाष्य रचा, लोगों में यह धारणा अवश्य थी कि वेदों में 'आसुरी माया' के यह अर्थ नहीं और न 'असुर' न 'माया'ही ऐसे घृणित अर्थों में प्रयुक्त होते थे। सायणभाष्य से भी यही पता चलता है। अथर्ववेद के मन्त्रों के अर्थ इस सम्बन्ध में विचारणीय हैं। वैदिक शब्दों के अर्थों का जबतक भरपूर अन्वेषण न होगा; उस समय तक वैदिक साहित्यरूपी अग्नि भ्रमरूपी राख के नीचे ही दबी पड़ी रहेगी।' [अद्वैतवाद द्वितीय संस्करण, पृष्ठ १२०]

वेद क्रान्तदर्शी पूज्यपाद महर्षि दयानन्द सरस्वतीने मारण मोहन, भूत, प्रेत, डाकिनी आदि का प्रबल विरोध किया है। [सत्यार्थ प्रकाश २य समुल्लास]

ग्रिफिथ महोदय ने अथर्व वेद में भूत, प्रेतों का भी वर्णन माना है।

अथर्व वेद काण्ड ४, सूक्त ३७ में भूत, प्रेत, राक्षस, गन्धर्व प्रभृति शब्दों को देखकर लोग भ्रम में पड़ जाते हैं। परन्तु ये सब विषैले कृमि हैं जो रोग उत्पन्न करते हैं। क्योंकि हींग, सरसों, तुलसी, गुग्गुल, भिलावे आदि गन्ध-वाली वस्तुओं की धूनी से इनका नाश हो जाता है। यथा—'हिङ्गु रक्षोघ्नम्' (राजनिघण्टु) हींग को 'रक्षोघ्न' अर्थात् राक्षसों का नाशक कहा है। इसका दूसरा नाम 'हिङ्गु जन्तुघ्नम्' (धन्वन्तरि नि०) 'जन्तुघ्न' अर्थात् जन्तुओं का नाशक दिया है।

इसी हींग को भूतनाशन हिङ्गु वै० नि० भूतनाशक अर्थात् भूतों का नाशक कहा है। हींगकी भाँति भिलावे और भूरी सरसोंका रक्षोघ्न [राक्षसों को नाश करने वाला] वच को रक्षोघ्नी=राक्षसों की नाशिका गुग्गुल को रक्षोह =राक्षसों का नाशक तुलसी को भूतघ्नी=भूतनाशिका चीड़ वृक्ष को भूतमारी =भूतोंको मारने वाला आदि नाम आयुर्वैदिक निघण्टुओं में कहे गए हैं।

राक्षस अथवा रक्षस्

असृग्भाजानि ह वै रक्षांसि — कौ० १०।४

रक्त पीने वाले कृमि राक्षस हैं।

रक्षो रक्षितव्यमस्मात् — निरुक्त ४।१८

जिस प्राणी से अपनी रक्षा करनी चाहिये वह राक्षस है। अतः रक्त पीने वाले कृमि को राक्षस कहते हैं।

डोनल्ड ए० मैकेन्जी लिखते हैं कि 'रोगों के क्रिमियों को काल्पनिक शक्ति से अदृश्य राक्षस कहा जाता था जिनका भोज्य मानव शरीर था।'

सूर्य का प्रकाश इन राक्षसों का नाशक है।

सूर्यो हि नाष्ट्राणा ँ राक्षसामपहन्ता

शतपथ ब्रा० १।३।४।८

अर्थात् सूर्य राक्षसों का नाशक है।

अग्नि भी राक्षस नाशक है। यथा—

अग्निर्वै ज्योती रक्षोहा — शतपथ ब्रा० ७।४।१।३४

अग्निर्हि रक्षासामपहन्ता — शत० १।२।१।६,९

अग्निर्वै रक्षासामपहन्ता — कौ० ८।४।१०।३

जल राक्षसनाशक है। यथा—आपो वै रक्षोघ्नी — तै० ३।२।३।१२

अप्सरस् [अप्सरा] गन्धर्व और पिशाच

गन्ध इत्यप्सरस उपासते' — शतपथ ब्रा० १०।५।२।२०

गन्ध वाले स्थानों में रहने वाले सूक्ष्म जन्तु अप्सरा कहलाते हैं। सूक्ष्म जन्तु गुलाब केवड़ा आदि सुगन्धित फूलों के अन्दर भी रहते हैं और फूल तोड़ते ही तुरन्त नाक से मिलाकर सूँघने से नाकके अन्दर घुस कर मस्तिष्क में रोग उत्पन्न कर देते हैं।

रूपमिति गन्धर्वा उपासते

शतपथ०१०।५।२।२०

रूप का सेवन करने वाले, रूप पर गिरने वाले गन्धर्व कृमि हैं।

अथो गन्धेन च वै रूपेण च गन्धर्वाप्सरसश्चरन्ति। — शत० ९।४।१।४

गन्धर्व कृमि गन्ध फेंकते हुए और अप्सरा कृमि रूप फेंकते हुए विचरते हैं।

पिशाच—यह नाम भी राक्षसों का है। पिशाच शब्द पिशित+अश इन दो शब्दों से बना है।

पिशितं मांसमश्नातीति पिशाचः — शब्दकल्पद्रुमः

पिशित मांसमाचामतीति पिशाचः — वाचस्पत्यकोष

मांसको खाने या चाटने वाला पिशाच कृमि है।

पिशित का अर्थ है मांस और अश का खानेवाले। अतः पिशाच का अर्थ मांस खाने वाले। +पिशाच कृमि ही होते हैं इसके सम्बन्ध में अथर्ववेद की स्वयं अन्तः साक्षी है। यथा—

यदस्य हृतं विहृतं यत् पराभृतमात्मनो जग्धं यतमत् पिशाचैः।
तदग्ने विद्वान् पुनराभर त्व शरीरे मांसमसुमेरयामः ॥

अथर्व० ५।२९।५

हे अग्ने! विद्वान्! [अस्य आत्मनः] इस देह का पिशाचैः मांस भक्षी रोग जन्तु ने जो अंश उखाड़ लिया, शरीर से अलग कर दिया और खा लिया उसे शरीर में फिर भर दे उस घाव का पूरा कर दे।

इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि पिशाच सूक्ष्म जन्तु हैं।

अथर्ववेद के आठवें काण्ड का छठा सूक्त विशेष रूप से राक्षसों पिशाचों आदि का वर्णन करता है। इस सूक्त के प्रथम मंत्र में ही दुर्णामा शब्द आता है।

दुर्णामा क्या है? यास्काचार्य कहते हैं:—

दुर्णामा क्रिमिर्भवति पापनामा। क्रिमिः क्रव्ये मेद्यति......'

निरुक्त अ० ६ खण्ड १२

अर्थात्—दुर्णामा कृमि होता है पापनामा। कृमि=कच्चे मांस में पुष्ट होता है। क्रव्य+मिद् अथवा गति अर्थ वाले क्रम से क्रम्याद शब्द बना है।

अतएव अथर्व वेद विज्ञान काण्ड है। इसमें उपचार सूर्यकिरण जल अग्नि वायु होम शल्य विष कृमि रोग पशुचिकित्सा आदि का सविस्तार वर्णन है जिसको न समझने से लोग मारण मोहन वशीकरण उच्चाटन जादू यन्त्र तन्त्र

+देखो—पं० विश्वनाथ विद्यालङ्कार कृत 'वैदिक पशु यज्ञ मीमांसा' प्रथम प्रकरण पृष्ठ ७

भूत प्रेत पिशाच आदि समझ कर अथर्ववेद को अर्वाचीन कहते हैं। हम यहां जादू मन्त्रतन्त्र मन्त्रादि शब्दों पर विचार करते हैं कि इनका वास्तविक तात्पर्य क्या है।

जादू

जादू—मंत्र विद्या को लोग जादू कहते हैं। जादू शब्द वेदके यातु शब्दका रूपान्तर या अपभ्रंश है। वेदमें यातु शब्दका अर्थ हिंसा है जो 'यातयति वध कर्मा' [निघ० २।१९] से बना है। तान्त्रिक परिभाषामें जादूके प्रयोगोंको 'इन्द्र-जाल' छलितयोग कहते हैं। 'इन्द्रजाल' में गुप्त बातों व हिंसापरक प्रयोगों का विस्तार पूर्वक वर्णन है।

सांस्कृतिक समय में इसका नाम 'योगकला' था। हिन्दूशास्त्रों में बहुत स्थानों में इस कला का विवरण पाया जाता है। रामायण महाभारत योगवा-सिष्ठ में इसका वर्णन है। श्रीशङ्कराचार्यजी के वेदान्त दर्शन की टीकाओं * में इसका वर्णन है। इन्होंने अपनी टीकाओं में जादूगरों के लिये 'मायावी' शब्द का प्रयोग अधिक किया है। यथा—यथा मायाविनश्चर्मखड्गधरात्... (शां० भा० १।१।१७)

मायया मायावी त्रिष्वपि'...शा० भा २।१।९

कहते हैं कि मानव-जाति के इतिहास में चित्त को प्रफुल्लित करने के लिए जादू सबसे पुराना साधन है। †

अथर्ववेद में शत्रु सेना के वधार्थ इन्द्रजाल रचने का वर्णन है। वहाँ विद्युत् आदि पदार्थों द्वारा ऐन्द्रजालिक विधियों से शत्रु सेना को क्षुब्ध, भयभीत, पीड़ित और हिंसित करने का विधान है। यथा—

---

*देखो—'शारीरिक भाष्य' १।३।१९, २।१।९; २।१।२८; १।१।१७।

†देखो—मेरा 'जादू विद्यारहस्य' शीर्षक लेख जो मासिक पत्र 'वैदिकधर्म' औंध, वर्ष २७ अप्रैल १९४६ ई० अङ्क ४ पृष्ठ १३९ से १४३ तक प्रकाशित हुआ है—लेखक।

२७२२

'बृहद्धि जालं बृहतः शक्रस्य वाजिनीवतः।
तेन शत्रूनभि सर्वान् न्युब्ज यथा न मुच्यातै कतमश्चनैषाम् ॥
मृत्योराषमा पद्यन्तां क्षुधं सेदिं, वधं, भयम्।
इन्द्रश्चाक्षुजालाभ्यां शर्व सेनाममूं हतम् ॥'

(अथर्व० ८।८।६,१८)

तन्त्र, यन्त्र और मन्त्र

तन्त्र ग्रन्थों में रोग दूर करने, सर्पादि के विष उतारने के भी वर्णन हैं। ऐसे गुप्त प्रयोगों को मन्त्र, तन्त्र और यन्त्र नाम से कहा जाता है।

वेद के गुप्त प्रयोग वैज्ञानिक हैं, परन्तु तन्त्र ग्रन्थों में कहे बहुधा कल्पित और अवैज्ञानिक हैं।

इस विषयमें परलोकवासी श्री प्रो० रामदास गौड़ एम० ए० लिखते हैं:—

तन्त्रोक्त मारणोच्चाटन, वशीकरणादि आभिचारिक क्रिया का प्रसङ्ग अथर्ववेद संहिता में पाया जाता है सही किन्तु तन्त्र के अन्यान्य प्रधान लक्षण नहीं मिलते। ऐसी दशामें तन्त्र का हम अथर्व संहितामूलक नहीं कह सकते।

('हिन्दुत्व' से)

मन्त्र का मनोविज्ञान के साथ, तन्त्र का सूक्ष्म भौतिक विज्ञान के साथ और यन्त्र का सूक्ष्म तथा स्थूल भौतिक विज्ञान के साथ सम्बन्ध है।

यन्त्रः—कला मशीन आदि को यन्त्र कहते हैं। यन्त्र में अमानुषी गुप्त शक्ति होती है। करोड़ों व्यक्तियों का काम अल्पकाल में ही यन्त्र द्वारा हो जाता है।

धूम्र शकट [रेलगाड़ी] जब प्रथम प्रथम चलनेको थी तो कहा जाता था कि गाड़ी ऐसी चलेगी जो विना अश्वों के सहस्रों मनुष्यों को अपने में बैठा कर ले जावेगी। लोग इसे जादू की बात समझते थे। कई ऐतिहासिकों का मत है कि सन् १८५७ ई० के गदर होने के कारणों में यह भी एक कारण था।

कलाएँ, मैशीनें स्थूल भौतिक विज्ञान हैं और अदृष्ट रूप शक्ति सूक्ष्म भौतिक विज्ञान है।

तन्त्र शब्द से फैलनेवाले प्रयोग अभीष्ट हैं जो पृथ्वी जल और वायु में बिछाए फैलाए जा सकते हैं और जो विषैली औषधियों, विद्युत् की लहरों द्वारा

रचे जाते हैं। वे दृष्ट हैं शब्दों (बम) के रूप में; अदृष्ट हैं—वायव्यरूप (गैसके रूप में)

मन्त्र—गुप्त भाषण और मनन करने योग्य सिद्धान्त को मन्त्र कहते हैं क्योंकि 'मत्रि गुप्तभाषणे' [चुरादि०] से मन्त्र शब्द का निर्माण होता है। तथा 'मन्त्रा मननात्' (निरुक्त ७।१२) इससे गुप्त भाषण और रहस्य का नाम मन्त्र हो सकता है। उसका क्षेत्र अधिकारी तक परिमित रहने से वह मन्त्र कहलाया। या अधिकारी वा जनसाधारण तक न पहुँचने और उसे न समझ सकने के कारण वह मन्त्र या जादू के नाम से कहा जाता है। उस ऐसे आदेश 'सजेशन' का नाम भी मन्त्र है जिसके उच्चारणमात्रसे किसी पात्र पर प्रभाव पड़ जावे, वह उसके कहने के अनुसार काम करने लगे, क्योंकि वाणीका नाम भी मन्त्र है। यथा—'वाग्वै मन्त्रः' शतपथ ब्रा० ६।४।१।७। इससे वाग्विद्या और विचार-विद्या का नाम मन्त्र है।

वाणी एसी परिमित, उचित और गम्भीर बोली जावे कि जिससे दूसरे पर शीघ्र प्रभाव पड़े। इसी प्रकार के सहसा प्रभावकारी अनुष्ठान या प्रयोग को मन्त्र विद्या कहते हैं। इसके पाँच विभाग कर सकते हैं जिनका कि अथर्ववेद के साथ सम्बन्ध जोड़ा जा सकता है। यथा—

मन्त्र विद्या के ५ विभाग

[१] संकल्प या आवेश

संकल्प या आवेश सेल्फ हिप्नोटिज़म वा मैग्नेटिज्म—प्रबल तथा साधिकार इच्छाका नाम सङ्कल्प है और उसका पुनः२ आवर्तन आवेश कहलाता है।

मनोविज्ञानका सर्वप्रथम आधार क्षेत्र सङ्कल्प और आवेश है। वेदमें सङ्कल्प अर्थात् इच्छा या कामनाको मनुष्य के आन्तरिक जीवन की मूर्ति और बाह्य जीवन की पूर्ति बतलाया है।

'कामस्तदग्रे समवर्तत मनसो रेतः......' अथर्व० १९।५२।१ में कामः =इच्छा सङ्कल्प को मन का सार कहा है।

'ऋषी बोधप्रतीबोधावस्वप्नो...अथर्व० ५।३०।१० में मन की दो तरंगों को बोध और प्रतिबोध=सङ्कल्प और विकल्प कहा है।

'परोपेहि मनस्पाप किमशस्तानि शंससि......' अथर्व० ६।४५।१ में पाप को हटाने का सङ्कल्प है।

'कृतं में दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः' अथर्व० ७।५२।८ में आशा, उत्साह, और सफलता प्राप्ति का सङ्कल्प है।

'अग्ने यन्मे तन्वा ऊनन्तन्म आपृण' यजु० ३।१८ में त्रुटि, दोष, न्यूनता दूर करने के लिये सङ्कल्प है।

'अपेहि मनसस्पतेऽक्राम परश्चर...' अथर्व २०।९६।२४ में रोग दूर करने का सङ्कल्प है।

'हस्तिवर्चसं प्रथतां बृहद् यशो अदित्या यत् तन्वः सम्बभूव' (अथर्व० ३।-२२।१) में हाथी के बल को अपने अन्दर आवेश करने का संकल्प है।

योगदर्शन, संयम प्रकरण में लिखा है:—'बलेषु हस्तिबलादीनि' (योग-, दर्शन विभूतिपाद।२४) हाथी के बल में संयम अर्थात् धारणा, ध्यान, समाधि करने से हाथी का बल प्राप्त होता है।

अमेरिका निवासी मार्डन लिखता है कि 'तुम अपने संकल्प का नियन्त्रण करके अपनी भवितव्यताको नियन्त्रित कर सकते हो।'

सद्वैद्यों के स्वास्थ्य लाभ पहुँचाने के संकल्प और आश्वासन रोगी के रोगों को हटाने में सहायक बन जाते हैं। यह संकल्प शक्ति का विषय मनोविज्ञान के साथ सम्बन्ध रखता है उसे जादू नहीं कहा जा सकता है।

[२] अभिमर्श और मार्जन

शरीर में सनसनाहट उत्पन्न कर देनेवाले स्पर्शका नाम है। इससे रोग तथा मानसिक दोष दूर किए जा सकते हैं। इस अभिमर्श का अज्ञानीजन झाड़, फूक के नाम से कहते हैं। प्रतीच्य विद्वान् इसे मेस्मरिज्म कहते हैं और अभिमर्श क्रिया का पास करना कहते हैं। अभिमर्श के द्वारा चिकित्सा करने का वर्णन अथर्ववेद में आया है। यथा—

अयं मे हस्तो भगवानयं मे भगवत्तरः।
अयं मे विश्वभेषजोऽयं शिवाभिमर्शनः॥ [अथर्व० ४।१३।६]

यहाँ हाथों के स्पर्शसे रोग दूर करने का वर्णन है।

हे प्यारे रोगी ! [अयं मे] यह मेरा [हस्तः] हाथ [भगवान्] भाग्यवान्, यशस्वी, भागधेयी फलवान् है [अयं मे भगवत्तरः] यह मेरा दूसरा हाथ अत्यधिक भाग्यवान्, यशस्वी और फलवान् है। (अय मे विश्वभेषजः) यह मेरा हाथ समस्त रोगों का शमनकारक औषधरूप है [अय शिवाभिमर्शनः] यह सुख शन्ति के स्पर्शवाला है।

'दक्षं त उग्रमाभारिषं परा यक्ष्मं सुवामि ते'

(अथर्व० ४ । १३ । ५)

हे रोगी, तू चिन्ता न कर, मैं अपने हाथों द्वारा तेरे अन्दरसे रोग को दूर करता हूँ और तुझ में बड़े भारी बल, स्वास्थ्य, सुख को भरता हूँ।

मार्जन [पुरश्चरण]—मार्जन के साधन जल, वस्त्र, कूर्च आदि हैं। शेष मन्त्रादि पढ़ने, झाड़-फूँक करने की विधि ढोंग है। जल में मूर्च्छा, बेहोशी आदि रोग हटाने के गुण आयुर्वेद में वर्णित हैं—'पानीयं श्रमनाशन क्लमहरम् मूर्च्छापिपासाहरम्" [भावप्रकाशनिघण्टु]।

जल में भीगे, मोटे वस्त्र का स्पर्श आंखों और सिरदर्द तथा अचेतता को हितकर है। कोई कोई रोग ऐसा होता है जो कि किन्ही बालों के झाड़न, ब्रुश से दूर हो जाता है। अति प्राचीनकाल से चमरमृग [चंवरी गौ] पुच्छ की बालमञ्जरी का उपयोग चला आता है। उसके स्पर्शसे त्वचाके दोष, क्रिमियों के संसर्गसे हुये रोग दूर होते हैं, शरीरमें ओज तथा बल प्राप्त होता है।

"यक्ष्मं त्वचस्यं ते वयं कश्यपस्य वीबर्हेण विवृहामसि"

[अथर्व० २ । ३३ । ७]

'कश्यप' का अर्थ मृग होता है जो चमरमृग के लिये है—"कश्यपः मृग विशेषः"

[वैद्यकशब्द सिन्धु]

इनके द्वारा चिकित्सा करने वाले लोग अपना प्रभाव जमाने को कहते हैं कि हमने मन्त्र या जादू के बल से रोग झाड़ दिया।

[३] आदेश या संवशीकरण—

सबल और सफल आश्वासन या उपदेशका नाम आदेश है जिसका कि पात्र पर प्रभाव अनिवार्य हो। आदेश द्वारा किसी रोगी के रोग को दूर करना, उसके

अन्दर स्वास्थ्य को लाना, किसी दुर्व्यसनी या पापी के दोषों को हटाना और उसके अन्दर सद्गुणों का लाना, ओज, बल एवं वीरता का प्रविष्ट कराना आदि होता है। आदेश से प्रायः सभी रोगों में लाभ होता है।

"ईर्ष्याया ध्राजिं प्रथमां प्रथमस्या उतापराम्......" (अथर्व० ६।१८।१) में मानसिक दोष, ईर्ष्या-डाह आदि को दूर करने का आदेश है।

"अग्निष्टे नि शमयतु यदि ते मन उद्युतम्......" (अथर्व० ६ । १११ ।२) यहां उन्माद रोग के लिये आदेश है।

प्रायः साधारण उन्माद या हिस्टीरिया रोग में रोगी अपने को भूत, प्रेत, चुड़ैल, राक्षस, पिशाच, गन्धर्व, अप्सरा आदि हूँ, ऐसा प्रलाप करने लगता है। ऐसा उन्माद अग्नि में लाल मिर्च, राई, सरसों, वायविडङ्ग, हींग, लहसुन आदि चरपरी और तीक्ष्ण औषधि को डाल कर धूँआ सुँघाने से दूर हो जाता है क्योंकि उस तीक्ष्ण धुँए से मस्तिष्क के तन्तुओं में उसकी परिस्थिति से विपरीत गति और सचेतता मिलती है।

ऐसे रोगों में 'लेकर एमोनियमफोर्ट' नामक अग्रेजी औषधि सुँघाने से भी अत्यन्त लाभ होता है।

"वृषा ह्यसि राधसे जज्ञिषे वृष्णि ते शवः" (ऋ० ५ । ३५ । ४)
यहाँ वीरता के लिये आदेश है।

[४] मणि बंधन

इसी का अशुद्ध रूप गण्डा, तावीज, नक्श, डोरा, धागा आदि चला हुआ है। कण्ठ, मस्तक, नाभि, हाथ आदि अंगों में मणियाँ बाँधी जाती हैं।

"मुक्ता विद्रुमवज्रेन्द्रवैडूर्यस्फटिकादयः।
चक्षुष्या मणयः शीता लेखना विषसूदनाः।
पवित्रा धरणीयाश्च पाप्मालक्ष्मीमलापहाः ॥
[सुश्रुत सूत्रस्थान—अ० ४६,सुवर्णादि वर्ग १८)

अर्थात् मोती, मूंगा, हीरा, लहसुनिया, स्फटिक आदि मणियाँ धारण करनी चाहिये, क्योंकि ये नेत्रशक्तिवर्द्धक, शीतल; दोष विलेखन करनेवाली, मनमें पवित्रता लाने, अशोभा को हटाने, शोभा को बढ़ाने और विष को दूर करने वाली हैं।

अथर्ववेद काण्ड ४ सूक्त ९ में 'आञ्जनमणि,' सूक्त १० में शंखमणि, काण्ड ६ सूक्त ४६ में 'अस्तृतमणि,' काण्ड २, सूक्त ४ तथा काण्ड १९ सूक्त ३४-३५

में 'जगिडमणि;, काण्ड ३. सूक्त ५ में पर्णमणि? काण्ड १९ सूक्त ३६ में शतवार-मणि; काण्ड १९ सूक्त ३१ में ओदुम्बरमणि; काण्ड १ सूक्त २९ में 'अभीवर्तमणि; काण्ड ८ सूक्त ५ में 'प्रतिसरमणि'; काण्ड १९ सूक्त २८-३०, ३२, ३३ में दर्भमणि; काण्ड १०, सूक्त ३ में 'वरणमणि'; काण्ड १०, सूक्त ६ से 'फालमणि' का वर्णन है।

फालमणिबन्धन कोई तावीज नहीं वरन् कृषिविद्या का विषय है।

वेदका मणिबन्धन साम्प्रदायिक विषय या मिथ्या-कल्पित तान्त्रिक मन्त्र यन्त्र, या नक्श, गण्डा, तावीज, जादू का विषय नहीं है किन्तु वैज्ञानिक, आयुर्वेदिक, धनुर्विद्या, शस्त्रास्त्रविद्या और कृषिविद्या से सम्बन्ध रखने वाला महत्त्वपूर्ण विषय है।

[५] कृत्या और अभिचार

इसी को भ्रान्ति से लोगों ने टोना, टोटका, मूठ मारना प्रभ्रांत रूप दिया हुआ है। अथर्ववेद के अनेक स्थलों पर कृत्या और अभिचार के प्रयोगों को शत्रु सेना एवं शत्रुओं पर फेंकने और प्रेरित करने के लिए कहीं पर अलग अलग और कहीं पर दोनों का एकसाथ भी वर्णन आता है।

कृत्या से तात्पर्य हिंसक क्रिया है जो कि शत्रु-सेना के घात के लिए प्रयुक्त की जाती है। यह इसका शाब्दिक साधारण स्वरूप है, कृञ् हिंसायाम् (स्वादि०) से कृत्या शब्द बना है, एव अभिचार का तात्पर्य उस प्रयोग से है जो कि शत्रु के शरीर में प्रविष्ट हो, उसे व्याधित तथा पीड़ित कर मार डालने में समर्थ हो। यह इसका शब्दिक साधारण स्वरूप है क्योंकि अभि उपसर्ग लगाकर चर भक्षणे [भ्वादि०] से अभिचार शब्द बना है जो शत्रु के शरीर पर आक्रमण कर या अन्दर प्रविष्ट हो उसे खा जाता है।

कृत्या के सम्बन्ध में लोगों के अन्दर एक भ्रम फैला हुआ है। जन साधारण कृत्या को मन्त्र अर्थात् जादू, टोना समझते हैं। यह भ्रम अर्वाचीन तान्त्रिक लोगों ने फैलाया है परन्तु प्राचीन तन्त्र ग्रन्थों में यह बात नहीं है। वहाँ मन्त्र से तात्पय किसी गुप्त अस्त्र-शस्त्र से है जो शत्रुसेन का घात कर सके। मन्त्रों का वर्णन करते हुए रावणकृत उड्डीशतन्त्र पुस्तक में लिखा है कि

मुसल क्षोभणे बन्धे शृङ्खला...नाराचः सैन्य भेदने उड्डीश तन्त्र ४४-१

यहाँ नाराच एक अस्त्र है इसे मन्त्रनामसे कहा है।

आचार्य चाणक्य जी कृत्या के सम्बन्ध में लिखते हैं—पुरोहितपुरुषाः कृत्याविचार ब्रू युः' (कौटिल्य अर्थशास्त्र, प्रकरण १५०-१५२)

अर्थात्— पुरोहित पुरुष वैज्ञानिक विद्वान् जन राजा को संग्राम के लिये कृत्या अभिचार की सम्मति दें, उनका सम्पादन करें।

अथर्वमें भी पुरोहितोंद्वारा कृत्याओंके प्रतिकार-सम्पादनका स्पष्ट वर्णन है

ते मे देवाः पुरोहिताः प्रतीचीः कृत्याः प्रतिसरैरजन्तु' (अथर्व० ८।५।५)

औषधियाँ भी विनाशक होने से कृत्याओं की नाशक हैं यथा—

उन्मुञ्चन्तीर्विवरुणा उग्रा या विषदूषणीः।

अथो बलासनाशनीः कृत्यदूषणीश्च यास्ता इहायन्त्वोषधीः। अथर्व० ८।७।१०

यहाँ स्पष्ट विषनाशक औषधियों को कृत्यानाशक कहा है।

इससे सिद्ध होता है कि शत्रुसेना का घात करने के लिये अग्नि ज्वालाओं में किन्हीं विषैले वानस्पत्य और खनिज पदार्थोंके प्रयोग का नाम कृत्या है।

अमा कृत्वा पाप्मानं यस्तेनान्यं जिघांसति।

अश्मानस्तस्यां दग्धायां बहुलाः फट् करिक्रति॥ अथर्व० ४।१८।३

इस मन्त्र से ज्ञात होता है कि कृत्या के अन्दर फट् २ करने वाले पटखने वाले पाषाण भी होते हैं, अर्थात् वानस्पत्य तथा खनिज विषों के साथ मैनशिल, पोटाश आदि पटखने, चटखने और अग्निज्वालक पदार्थों का बना आघातकारी प्रयोग कृत्या है जैसा कि क्रम होता है। कृत्या दो प्रकारकी हैं यथा—

'याः कृत्या आङ्गिरसीर्याः कृत्या आसुरीर्याः।

कृत्याः स्वयकृता या उ चान्येभिराभृताः॥

उभयीस्ताः परा यन्तु परावतो नवतिं नाव्या अति॥ अथर्व ८।५

अर्थ—[याः] जो [आङ्गिरसीः कृत्याः] * अग्नि से या अग्निज्वालाओं को छोड़ती हुई कृत्याएँ हैं और दूसरी जो † आसुरीकृत्याः=केवल प्राणों में रमण करने, प्राणों में आघात पहुँचाने वाली मायामयी गुप्त वायव्य रूप=गैसरूपमें फैलने वाली कृत्यायें हैं। जो ये दोनों कृत्याएँ शत्रुसेना के घातार्थ अपना की हुई हों और जो भी ये दोनों कृत्याएँ दूसरों ने, शत्रुओं ने हमारे घातार्थ सम्पादन की हैं वे दोनो प्रकार की कृत्याएँ नब्बे पूर्ण भरी नदियों को अतिक्रमण करके दूर चली जावें।

---

* 'अङ्गिरा उ ह्यग्निः' शत० १।४।१।२५ 'अङ्गिरा वा अग्निः' शत० ६।४।४।४

† 'मायेत्यसुरा उपासते' शतपथ १०।५।२।२०। 'आसुरी माया स्वधया कृतासीति प्राणा वा असुरस्तस्यैषा माया स्वधया कृता' शतपथ ६।६।२।६

किसी शत्रु को खानपानमें विष देकर हिंसा करने का नाम अभिचार है।

'शब्दकल्पद्रुम' में इसका अर्थ है—'अभिचारः आभिमुख्येन शत्रुवधार्थं चारः कार्यकरणम्।'

'परि त्वा पातु समानेभ्योभिचारात्सबन्धुभ्यः......' [अथर्व० ८।२।२६]

यहाँ समानस्पर्द्धा वाले जनों तथा बन्धुओं द्वारा किए अभिचार से मर जाने की सम्भावना और भेषज से न मरने देने की चर्चा से अभिचार निश्चित खान-पानादि में विष प्रयोग का नाम है। अभिचार के दूर करने का एक और उपाय अथर्ववेद काण्ड १० सूक्त ३ मन्त्र ७ में बतलाया है—

'अरात्यास्त्वा निर्ऋत्या अभिचारादथो भयात्।
मृत्योरोजीयसो वधाद् वरणो वारयिष्यते॥' (अथर्व० १०।३।७)

इस मन्त्र में कायरता,उदासीनता, अभिचार, भय, मृत्यु और वध से बचाने वाला 'वरण' मणि बतलाया है।

यहाँ इस मन्त्र में इसे'अभिचार' से बचाने वाला इसी लिये कहा है कि 'अभिचार' खान-पान में विष प्रयोग हो जाने पर हृदय की रक्षा भी अत्यन्त आवश्यक है जैसा कि 'सुश्रुत' और 'चरक' में विषभक्षण पर हृदय की रक्षा करना बतलाया है 'हृदयावरण नित्यं कुर्याच्च मित्रमध्यगः' [सुश्रुत १।१८] 'आदौ हृदयं रक्ष्य तस्यावरण पिबेद्यथालाभम्' चरक, विषचिकित्सा २३।४४

अतः अथर्ववेदने 'वरण' वरनाको अभिचारसे रक्षाका साधन बतलाया है। अतएव 'अभिचार' कोई तान्त्रिक, कल्पित मन्त्र या जादू नहीं है।

उपर्युक्त इन पाँच बातों के द्वारा शारीरिक रोगों को हटाना, उन्माद-भूतोन्माद आदि मानसिक दोषों को दूर करना, दुर्गति अकर्मण्यता अशोभा को भगाना, निराशा को हटाना, ईर्ष्या आदि मानस पाप का शमन करना, अशान्ति को दूर करना, दुष्टस्वप्न के प्रभाव को मिटाना, वीरता आदि गुणों का आवेश करना, यातुधान नाशक अर्थात् हिंसापरक प्रयोगों और वस्तुओं एवं प्राणियों को नष्ट करना, शत्रु का घात करना, अपने अन्दर से रोगों और दोषों को हटाकर स्वास्थ्य तथा शुभगुणों को लाना प्रभृति विषयों का वर्णन अथर्व में है। इनको न समझकर लोगोंने अथर्वमें मन्त्र जादू सिद्ध किया।

वास्तवमें प्रचलित भूतप्रेतपूजन, जादू, मन्त्र,तन्त्र, आदि अनार्य सभ्यता है।

इस पुस्तक के लेखक—

श्री शिवपूजनसिंह कुशवाहा 'पथिक'

साहित्यालंकार, सिद्धान्तशास्त्री

[illegible] ग्रन्थमाला के सम्पादक

तथा

भूमिका-लेखक

श्री वीरेन्द्र शास्त्री एम० ए०,

साहित्याचार्य, काव्यतीर्थ
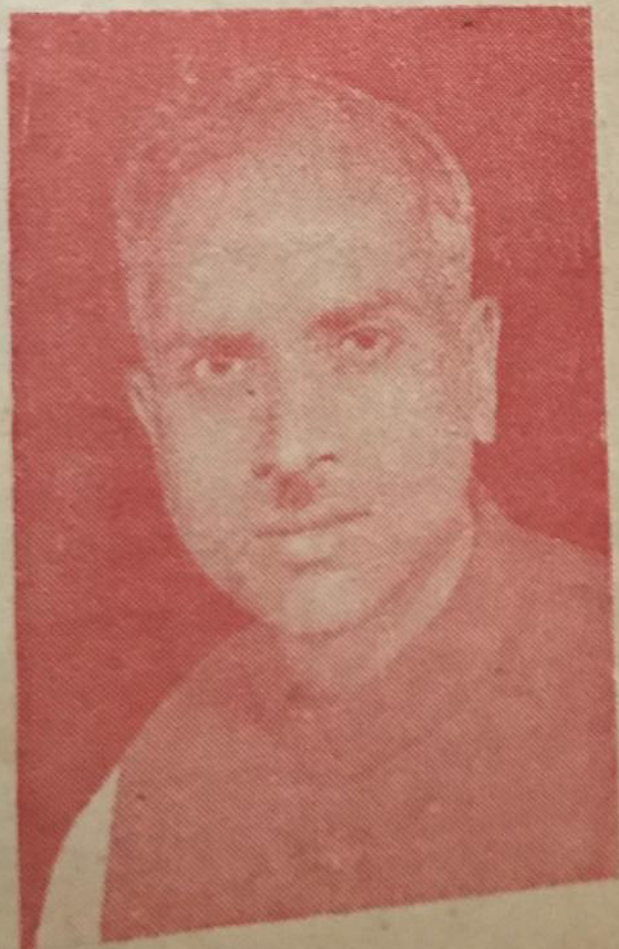
लेखककी निम्नलिखित अन्य रचनाएँ शीघ्र प्रकाशित होंगी—

(१) ऋषि दयानन्द जी कृत वेद-भाष्यानुशीलन
(२) ऋग्वेद के १० म मण्डल पर पाश्चात्यों का कुठाराघात
(३) आर्यों पर गोमांस का दोषारोपण
(४) इन्द्र का वैदिक स्वरूप
(५) इन्द्र का काल्पनिक स्वरूप
(६) उपनिषदों की उत्कृष्टता
(७) भारतीय इतिहास की रूपरेखा पर एक दृष्टि
(८) भारतीय इतिहास और वेद

पुस्तक प्राप्ति स्थान—

(१)—श्री शिवपूजनसिंह कुशवाहा, पोस्ट बाक्स २५०, कानपुर
(२)—आदर्श साहित्य मंडल जगमबाड़ी बनारस।

वेदवाणी प्रेस, ३५।१२, जगमबाड़ी, बनारस में मुद्रित